आखिर क्यों?

डॉ एस बी धर

Sample copy. Not For Distribution.

आखिर क्यों?

Sample Copy. Not For Distribution.

Publishing-in-support-of,

EDUCREATION PUBLISHING

RZ 94, Sector - 6, Dwarka, New Delhi - 110075
Shubham Vihar, Mangla, Bilaspur, Chhattisgarh - 495001

Website: *www.educreation.in*

© Copyright, Author

All rights reserved. No part of this book may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted, in any form by any means, electronic, mechanical, magnetic, optical, chemical, manual, photocopying, recording or otherwise, without the prior written consent of its writer.

ISBN: 978-1-61813-644-2

Price: ₹ 285.00

The opinions/ contents expressed in this book are solely of the author and do not represent the opinions/ standings/ thoughts of Educreation.

Printed in India

Sample Copy. Not For Distribution.

आखिर क्यों?

डॉ एस बी धर

EDUCREATION PUBLISHING
(Since 2011)
www.educreation.in

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

लेखक के बारे में

प्रो ० एस ० बी ० धर एक प्रख्यात गुरू, प्रेरक वक्ता, और अच्छे विश्लेषक हैं। इन्होंने विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों, तथा प्रशासनिक सेवाओं की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में लगे प्रतिभागियों के लिये कई पुस्तकें लिखी हैं।

उनकी कुछ प्रमुख पुस्तकें हैं : हैंडबुक आफ मैथेमेटिक्स फार आईआईटी जेईई, रीजनिंग एबिलिटी, ए टेक्स्टबुक आन इंजिनियरिंग मैथेमेटिक्स, लैटरल विजडम, प्रोग्रेस इन मैथेमेटिक्स सिरीज कक्षा नर्सरी से 8 तक, प्राब्लेम साल्विंग असेसमेंट सिरीज कक्षा 6 से 12 तक आदि।

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

आभार

हम पुस्तक की आंतरिक साज–सज्जा करने वाले, मुखपृष्ठ के डिजाइनिंग विशेषज्ञ, और एडूक्रियेशन प्रकाशन परिवार के सदस्यों के आभारी हैं जिनके प्रयास से यह पुस्तक पाठकों के हाथ में है।

हम अपने उन सभी पाठकों के प्रति आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तक को सराहा है। हम उन पाठकों के प्रति भी आभारी होंगे जो समय–समय पर इस पुस्तक को और भी रूचिकर बनाने के लिये हमें सार्थक सुझाव देंगे।
धन्यवाद!

- एस ०बी ० धर

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

पिता अपने यश से पुत्र को हमेशा यशस्वी बनाता है। यदि पुत्र केवल पिता की सामान्य बातों को ही सदैव मानता रहे तो फिर उससे कभी अधर्म अथवा अपकीर्तिमय कार्य होने की संभावना नहीं रहती है क्योंकि पिता अपकीर्ति के कार्य कभी भी अपने पुत्र से नहीं कराता है। वह केवल उसके भविष्य को संरक्षित करने और उसे संवारने में ही तल्लीन रहता है। इस पृथ्वी पर पिता, और गुरू ही ऐसी दो विभूतियां हैं जो क्रमशः अपने पुत्र और अपने शिष्य के अपने से आगे निकल जाने पर गर्व का अनुभव करती हैं, अन्य तो ईर्ष्या करते हैं।

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

मित्र सदैव तत्पर रहता है।
मित्र पलक झपकते सहायता करता है।
संबंधी सोच–विचार करता है।
द्रौपदी ने पहले संबंधियों से सहायता मांगी।
सबने कोई न कोई कारण बताकर
आंखें फेर लीं।
पर, जब उसने अपने सखा कृष्ण को
याद किया तो
उन्होंने उसे तो सुरक्षित रखा ही
साथ ही साथ सभा में
उपस्थित सभी लोगों को
वस्त्रहीन कर शिक्षा देने का प्रयत्न किया
कि यदि उनके साथ ऐसा हो तो
उन्हें कैसा लगेगा?

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

समर्पण

यह पुस्तक
उन गुरूओं को समर्पित है
जिनके आशीर्वाद से हम
कुछ कहने के काबिल हो सके।

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

प्रस्तावना

पौरूषता ने जब जब प्रकृति पर प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न किया, उसकी संरचना से छेड़छाड़ किया, उसकी निश्छलता को दूषित किया, उसके सौंदर्य को खिलने से पहले अवरोधित किया, उसकी मर्यादा को भंग करने का प्रयास किया, उसकी सोच को अपने अनुकूल बदलने की धृष्टता की, उसके स्नेहशील आचरण को वैमनस्यपूर्ण करने का प्रयत्न किया, उसकी सहज एकता को तोड़ने की सोचा, उससे अपनी इच्छानुसार प्रतिफल की आस लगायी, तब तब युद्ध जैसी स्थिति आयी, प्रलयंकारी परिस्थितियां उत्पन्न हुयीं, विध्वंश हुआ, सब कुछ विनष्ट हो गया, और तब पौरूषता को पता चला कि प्रकृति पर अंकुश ठीक नहीं है, प्रकृति उन्मुक्त रहने के लिये है, सौन्दर्य स्वेच्छा से निखरने के लिये है, सहजता अतृप्त रहने, और विकसित होने के लिये है।

किसी बागीचे के विकास में उसके माली की सहनशीलता, अनवरत निगरानी और मेहनत जरूरी होती है। कोई भी पौधा इसलिये विकसित नहीं होता है कि पौधे का बढ़ना उसकी नियति है। वह इसलिये बढ़ता है कि माली ने उस पर ध्यान दिया, उसके लिये उपयुक्त वातावरण बनाया और उसे वह सबकुछ दिया जो उसके बढ़ने के लिये हर क्षण जरूरी था। ठीक यही प्रक्रिया संस्कृति तथा सभ्यता के विकास व संरक्षण के लिये भी आवश्यक है।

समय समय पर हममें और हमारे चारों ओर उपलब्ध सामाजिक परिसर में क्या क्या विकास हुआ और साथ ही साथ उसमें क्या क्या कमियां आयीं, इन सबकी समीक्षा होती रहनी चाहिये। यह समीक्षा इस आधार पर होनी चाहिये कि आखिर क्यों, ऐसा हुआ?

Sample Copy. Not For Distribution.

प्रशासनतंत्र कठोरता के कारण ही अपना नियंत्रण बनाने में समर्थ होता है परंतु जब प्रशासक का आचरण हर क्षण बदलने लगता है तब उसकी नीतियां प्रभावित होने लगती हैं और असामान्य परिस्थितियों की दशा में उन पर उसका नियंत्रण प्रभावी नहीं हो पाता है। अव्यवस्था उपजने लगती है। इसके विपरीत अच्छे नियंत्रक अपने निर्णयों पर अडिग रहते हैं। उनके प्रभावों की समीक्षा करते हैं। प्रतिकूलता की स्थिति में उसमें नयापन लाते हैं और प्रतिकूल प्रभाव के लिये स्वयं को उत्तरदायी मानने से पीछे नहीं हटते हैं। वह यह कह कर अपने उत्तरदायित्व से नहीं भाग निकलते कि उनके आशय को तोड़ा मरोड़ा गया।

यह सत्य है कि विनाश के बाद कुछ भी शेष नहीं रहता है। विनाश अपने कई नामों : अनहोनी, प्राकृतिक आपदा, युद्ध आदि के साथ एक ही परिणाम तक पहुंचता है और वह हैः सबकी समाप्ति, सबका अंत। बिडम्बना ही है कि सबकुछ हाथ से जाने के बाद ही हमारी समझ में आता है कि हमसे कहीं कुछ गलती हो गयी जो नहीं होनी चाहिये थी, आखिर क्यों? आखिर क्यों? ऐसी ही परिस्थितियों की विवेचक द्वारा विवेचना का प्रयास है।

- प्रज्ञा

Sample Copy. Not For Distribution.

भूमिका

ज्ञान, ईश्वर, विश्वास, और प्रकृति की कोई सीमा नहीं होती है। इनका कोई स्वरूप नहीं होता है। इनका निश्चित स्थान नहीं होता है। इनका किसी से कोई संबंध नहीं होता है। जहां इन्हें सम्मान मिला, जहां किसी ने इन्हें संभालने की चेष्टा की, जहां इन्हें किसी ने रोका, वहीं ये रूक गये, वहीं के बन गये और वहीं पर ये सब के सब बस गये। इनका निवास बनते ही इनके आस–पास से क्रोध, और छल–प्रपंच आदि कहीं और बसने के लिये निकल पड़ते हैं।

अगर हम किसी विनाश, युद्ध, अथवा कलह के लिये उत्तरदायी कारणों, उसके पात्रों, पात्रों के संस्कारों, उनके कर्मों, समाज के प्रति उनके कर्तव्यों को समझने का प्रयास करें तो उपसंहार तीन भागों में विभक्त होता मिलता है–युद्ध के लिये तत्पर होने वाले, युद्ध से बचने व बचाने वाले और युद्ध का अंत युद्ध से करने की चाह रखने वाले।

पहली श्रेणी में आते हैं–राजप्रमुख अथवा सत्ता के सिंहासन पर बैठनेवाले। दूसरी श्रेणी में आते हैं–गुरूजन, राजदरबार के श्रेष्ठजन, और सत्ता से उपेक्षित राजपरिवार के अन्य सदस्यगण। तीसरी श्रेणी में आते हैं–ईश्वरीय अंश जो हर काल व परिस्थिति में किसी न किसी रूप में उपस्थित रहते हैं।

युद्ध के पात्रों के कार्य, कर्तव्य और चरित्र को समझने के लिये सबसे अच्छा ग्रंथ है, महर्षि वेदव्यास रचित महाभारत। इसमें विनाश के पूर्व से लेकर नव निर्माण तक के भारत का इतिहास है। जब हम किसी अवनति अथवा विध्वंश के कारणों के मूल्यांकन के लिये इसका सहारा लेते हैं तो हम पाते हैं कि तात्कालिक राजा धृतराष्ट्र बहुत ज्ञानी, बलशाली और धर्ममय था परंतु सत्ता छिनने के डर से ग्रस्त था और इसी कारण

Sample Copy. Not For Distribution.

उसने अपने पुत्र सुयोधन को सत्ता की आसक्ति से ऐसा भरा कि वह सुयोधन से दुर्योधन बन बैठा।

पांडवों के चरित्र से हमें ज्ञात होता है कि वे शक्तिसंपन्न होते हुये भी अपनी माता कुंती के कठिन अनुशासन में रहने के कारण सदैव धर्ममय बने रहे और कष्ट सहन करने में संकोच नहीं किये। समाज व राज्य के प्रति अपना कर्तव्य करते हुये, विषम परिस्थितियों में भी सहजता से जीवन यापन किये। कुंती अंतर्मुखी थी। वह हर परिस्थिति से समझौता कर लेती थी और किसी से कोई शिकायत नहीं करती थी।

द्रौपदी का चरित्र दर्शाता है कि वह कर्मशील थी। वह अन्याय को सहन नहीं करती थी। वह पांडवों को हर परिस्थिति से कुछ न कुछ नया सीखने, समाज से आवश्यकतानुसार ग्रहण करने और समाज को उनकी आवश्यकतानुसार समय पर लौटाते रहने के लिये प्रेरित करती थी। यही कारण रहा कि पांडवों का प्रभाव क्रमशः बढ़ता गया।

कृष्ण का चरित्र दर्शाता है कि एक ही जैसे कार्य हर परिस्थिति में नहीं किये जा सकते हैं। ऐसा करने से उचित परिणाम नहीं आते हैं, हमें समय के साथ चलना चाहिये और समय के अनुकूल ही कर्म करना चाहिये। बिना कुछ किये, कुछ मिलता नहीं है।

हमारे जीवन के हर मोड़ पर, विकास के हर पग पर, और विध्वंश के हर पल के पूर्व मानसिक संघर्ष चलता रहता है। आवश्यकता रहती है कि हम अपने अंदर के पात्रों को हर क्षण सही सही पहचानें और पूर्व में घटी घटनाओं तथा उनके परिणामों को याद रखते हुये सही निर्णय लें ताकि हमारा विकास, बिना किसी विनाश के हो, अन्यथा विनाश के उपरांत तो विकास होना ही है।

हमने, ***आखिर क्यों?*** में अपनी क्षमता और संकल्पना से तथ्यों को विवेचित करने का प्रयास किया है। आशा है, प्रयास उपयोगी बन पाया है।

- डॉ एस बी धर

Sample Copy. Not For Distribution.

संपादक की बात

कभी–कभी सभ्यतायें ऐसे मोड़ पर आ खड़ी हो जाती हैं, जहां से उन्हें आगे का रास्ता नहीं सूझता है। वे आगे बढ़ने में अपने को भ्रमित पाती हैं। उनका कदम बढ़ाना रूक जाता है। वे असहाय हो जाती हैं। वे बहाना ढूंढ़ने लगती हैं कि कैसे इस मोड़ तक पहुंचने को सही सिद्ध किया जाये।

इस भयावह स्थिति तक पहुंचने के लिये उनकी समाज के प्रति निरंकुशता, अपनी जिम्मेदारी के प्रति अनास्था और सामाजिक मूल्यों के प्रति उनमे पनपी लापरवाही जिम्मेदार रहती है। उन्हें मालूम रहता है कि कमियां उनमें आ चुकी हैं। इन बुराइयों से निकलने का रास्ता उनके पास नहीं होता है क्योंकि उन्होंने अपने चारों ओर एक आडम्बर खड़ा कर रखा होता है। ठीक यही समय होता है जब उस सभ्यता को, उसके द्वारा स्थापित सत्ता को, उसके द्वारा निर्धारित मूल्यों को हटा दिया जाये और नयी संभावनाओं को जगाया जाये, नयी बिधाओं को राह दिखाया जाये, नयी खोजों के लिये नये रास्ते बनाये जायें, और नव सृजन को अवसर दिया जाये।

सत्ता में परिवर्तन सामान्य तरीके से संभव नहीं होता है, और विकास की नयी पहल को आसानी से स्वीकृति नहीं मिलती है। यह वह समय होता है कि जड़ हो रहे व्यवस्थातंत्र को जड़ से हटा कर नये मूल्य, नयी व्यवस्था और नयी सोच को जगह दिया जाये क्योंकि समय साक्षी रहा है कि नयी सत्ता ने ही महत्वपूर्ण परिवर्तनों को दृढ़ आधार दिया है।

परिवर्तन की राह आसान नहीं होती है। परिवर्तन को अपनाने के लिये कोई तैयार नहीं होता है। जब सबकुछ सामान्य चलता रहता है चाहे वह अव्यवस्थित व्यवस्था ही क्यों न हो तब तक किसी को कोई समस्या नहीं होती है। जैसे ही कोई व्यक्ति किसी व्यवस्था से किसी कमी को दूर करने का

Sample Copy. Not For Distribution.

प्रयास करता है अथवा उस कमी को सबकी निगाह में लाने का प्रयास करता है वैसे ही वह सबके आकर्षण का केंद्र बन जाता है और वह सबकी नजरों में खटकने लगता है। उसे सब शत्रु समझने लगते हैं। धीरे धीरे लोग उस व्यक्ति से दूर होने लगते हैं। वह अकेला पड़ने लगता है और अंततः वह निःसहाय हो जाता है। वह समाज को अपने प्रति लापरवाह पाता है। मौका पाकर, वह समाज से बगावत कर बैठता है और कालांतर में वह उस अव्यवस्थित व्यवस्था को नष्ट करने का रास्ता चुन लेता है। इस रास्ते को वह अंतिम उपाय मानकर चल पड़ता है, आखिर क्यों?

बालपन का सुयोधन समय बीतते बीतते दुर्योधन बन गया, कवच और कुंडलधारी दानवीर कर्ण अपने मित्र के लिये दुर्मतिवान हो गया, धार्मिक आचरण के धनी और अप्रतिम पौरूष वाले धृतराष्ट्र, तथा ज्ञानी कृपाचार्य की उपस्थिति में महासभा में द्रौपदी निर्वस्त्र होते होते बची। इच्छामृत्यु का वरदान पाये महामहिम भीष्म को मृत्यु की प्रतीक्षा करनी पड़ी। अर्जुन जैसे अजेय शिष्य का निर्माण करने वाले आचार्य द्रोण का उनके ही शिष्य धृष्टद्युम्न ने रणभूमि में सबके समक्ष बध कर दिया।

सदा धर्म की बात करने वाले और सबका हित चाहने वाले विदुर की बात कभी किसी ने नहीं मानी। धर्मराज कहलाने वाले युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ सदैव कष्ट में रहे। धर्म के नाम पर प्रतिपल अधर्म अपनाया गया। हर एक ने अपने तर्कों को ही धर्ममय माना। आनंद व भोग के लिये विनाश की लड़ाई हुयी। सबने चाह कर भी युद्ध को रोकना असंभव मान लिया। इतना बड़ा कुरूवंश विनष्ट हो गया और अधर्मियों के नाश के लिये अवतार लेने वाले कृष्ण अंततः बहेलिये का शिकार बन गये, आखिर क्यों?

आखिर क्यों, हमारी उस सोच को पहचानने का प्रयत्न है जिसके इर्द गिर्द हम हर क्षण जीते हैं और प्रतिपल अपने कार्यों के परिणाम की आशा करते हैं। विवेचक ने अपनी विवेचना में इस तथ्य को ध्यान में रखा है कि यदि हमारे जीवन का अंतराल, प्रातःकाल हमारी आंखें खुलने से लेकर, देर रात जब हमारी आंखें बंद होती हैं, तभी तक का हो, तब

Sample Copy. Not For Distribution.

हम उस जीवन को कैसे जियेंगे, उस काल में क्या क्या करेंगे, कैसे करेंगे, और कितना फुर्तीलापन अपने अंदर रखेंगे? यदि हम यह सब अपनी आंखें बंद होने से पहले कर पायेंगे तो आखिर क्यों?

इंजि ० शचीश

Sample Copy. Not For Distribution.

Sample Copy. Not For Distribution.

1

स्वयं को समय के साथ बदलने का प्रयास करते रहना सफलता के मार्ग पर चलना होता है।

चारों ओर चीड़ के ऊंचे ऊंचे पेड़ हैं। ऊपर बादलों का झुंड है। सांय सांय करती तेज हवायें चल रही हैं। नीचे बहती नदी सफेद लकीर सी दीख रही है। हर तरफ सन्नाटा है। दूर तक जाती एक पगडंडी दीख रही है। लगता है कि यहां बहुत दिनों से कोई आया नहीं है। आसमान वीरान हो रहा है। पहाड़ की ऊंची चोटियां हल्की लालिमा बिखेरती चमक रही हैं, मानो अभी सूर्य वहीं से गुजरा है। कोई पक्षी नहीं दीख रहे हैं।

अचानक फुसफुसाट की आवाज आनी शुरू हो गयी है। लगता है, आस पास में कोई बातें करता चल रहा है। हमने अपनी चाल थोड़ी सजगता से बढ़ा दी है। अब हमें कुछ कुछ सुनायी पड़ने लगा है। किसी बात को लेकर आपस में विचार विमर्श हो रहा है। वे आपस में तर्क वितर्क कर रहे हैं। दोनों अपने में मग्न हो बातें करते चले जा रहे हैं। उन्हें इसका भान भी नहीं है कि हम उनकी बातें सुन रहे हैं। हम पीछे हो लेते हैं। दूरी बनाकर चलते हैं। अब हम सबकुछ स्पष्ट सुन रहे हैं। हमें दीख रहा है कि एक विशालकाय जटाजूटधारी तेजस्वी व्यक्ति हैं और उनके साथ बराबर में चल रहे दूसरे महाशय उम्र में लगभग उन जैसे ही हैं परंतु पहनावे में साधारण हैं। दोनों के मुखमंडल पर तेज दीप्तमान है। हमें सुनायी देता हैः

संजय! तुम हमारे काल को कैसा मानते हो?

Sample Copy. Not For Distribution.

राजन्, आपका राज्य–काल ईसापूर्व 3000 वर्ष पहले था। उस समय भारत कई राज्यों में विभक्त था। प्रमुख राज्य थे : गांधार, मद्र, हस्तिनापुर, पांचाल, कांपिल्य, कोशल, अंग, काशी, विदर्भ, मथुरा, विराट, केकय, द्वारिका, आदि। सभी राज्य स्वयं में स्वतंत्र और बलशाली थे। इन्हीं राज्यों में से एक था, आपका हस्तिनापुर। उस समय आज का भारतवर्ष आर्यावर्त कहलाता था। आपका हस्तिनापुर समस्त आर्यावर्त का सबसे समृद्ध और शक्तिशाली राज्य हुआ करता था।

हस्तिनापुर में परंपरागत रूप से राजसिंहासन योग्य को ही मिलता था। यहां ज्येष्ठता मापदंड नहीं थी। यहां उत्तराधिकार का प्रश्न राजमंडल तय करता था। यहां का राजमंडल अत्यंत प्रभावी और शक्ति संपन्न रहा। यहां का शासनतंत्र राजा के अतिरिक्त श्रेष्ठजनों, आचार्यों व नीतिज्ञों के ऊपर भी निर्भर रहा जो समय समय पर राजा का मार्गदर्शन करते तथा स्वयं राज्य की रक्षा में खड़े रहते। यहां शासन की शक्तियां एक व्यक्ति के अंदर निहित नहीं रहीं। वे भिन्न भिन्न जगहों पर सुरक्षित, व्यवस्थित और स्थापित रहीं।

राज्य के शासनतंत्र पर जब तक श्रेष्ठजनों, आचार्यों व नीतिवानों का प्रभाव रहा, सबकुछ ठीक चला परन्तु जैसे ही आपने उन श्रेष्ठ जनों से राज्य के संरक्षण का अधिकार छीनकर उन्हें अपना सेवक बना लिया, राज्य कमजोर हो गया और विघटनकारी शक्तियां प्रभावी हो गयीं। राज्य धीरे धीरे विघटित होने लगा।

इस विघटित होते और पुनर्निर्माण के कालखंड को महाभारत काल कहा गया। यह एक नियम प्रधान जीवन का काल रहा। नियम–भंग होने पर, पूर्व निश्चित दंड के पालन का काल रहा। यहां वचन निभाने की परंपरा रही। यह वह काल रहा जिसमें कोई व्यक्ति यदि कोई प्रतिज्ञा कर लेता तो वह हर हाल में, संभव अथवा असंभव अवस्था में, रहकर भी उसका पालन करता।

यह शौर्य प्रदर्शन का काल रहा। यह शास्त्र के संरक्षण और अध्ययन का काल रहा। यह अनेक प्रकार के शस्त्रों के संग्रह, उनके लगातार अभ्यास और उसके बाद अनुशासनबद्ध

Sample Copy. Not For Distribution.

होकर निश्चित नियमों का पालन करते हुये, उन शस्त्रों के प्रयोग करने का काल रहा। यह वह काल था जिसमें दीगयी विद्या को प्राप्त करने के उपरांत कैसे प्रयोग किया जाये, इसका निर्धारण विद्या देने के पूर्व ही कर दिया जाता था। यह वह काल था जिसमें नियम–भंग होने की दशा में, उस विद्या के निष्फल होने की शत–प्रतिशत पूर्व निर्धारित व्यवस्था थी।

इस काल में विध्वंशकारी शस्त्रों की पूर्ण सुरक्षा की व्यवस्था थी। शस्त्रों की सुरक्षा में नियुक्त स्वाभाविक नियंत्रक अनेक दिव्यगुणों से संपन्न रहे। शस्त्रों व शास्त्रों की शिक्षा देने के लिये सही पात्रों के चयन में बड़ी सावधानी बरती जाती थी और उनकी कठिन परीक्षा ली जाती थी ताकि भविष्य में प्राप्त ज्ञान का वे दुरूपयोग न कर सकें।

यह एक व्यक्ति विशेष के पास समस्त शस्त्र व शास्त्र होने के निषेध का काल रहा। यह एक ही व्यक्ति को सर्वशक्तिमान न बनने देने की व्यवस्था का काल रहा। यह शारीरिक शौर्य प्रदर्शन का काल रहा। यह शरीर को स्वस्थ रखने के महत्व को समझने का काल था। इस काल में यह स्पष्ट रहा कि यदि शरीर स्वस्थ है तो मानसिक स्थिति अच्छी रहेगी और सीखी विद्या का सही प्रयोग संभव होगा। यह शारीरिक शौष्ठव का काल था। यह सामान्य जन जीवन में निष्पक्ष व्यवहार की मान्यता का काल था। यह छल व प्रपंच का उपयोग कर सफलता पाने की अवस्था में कीर्ति कलंकित होने की धारणा का काल था।

धनुर्विद्या, तलवारबाजी, गदायुद्ध, मल्लयुद्ध, रथयुद्ध आदि के सीखने, उनका अभ्यास करने व शत्रु पर उनका प्रयोग कर उसके प्रतिफल जानने का काल था। प्रकृति के संरक्षण और आवश्यकतानुसार उपभोग का काल था। प्रकृति का दोहन न होने देने की परंपरा का काल था।

यह मनुष्य के अतिरिक्त ऋषि, मुनि, देवता, यक्ष, गंधर्व, नाग, किन्नर और राक्षस आदि समुदाय के प्राणियों की उपस्थिति का भी काल रहा जो मनुष्यों की ही भांति संपन्न और समर्थवान थे। सब एक साथ मिलकर भी रहते और अलग अलग हिस्सों में रहकर भी अपना अलग अलग विकास करते

Sample Copy. Not For Distribution.

थे। इन सभी में एक बात सामान्य रही कि सभी धार्मिक प्रवृत्ति के रहे, सभी हर प्रकार के शास्त्रों के ज्ञान से संपन्न रहे और हर प्रकार के अस्त्र–शस्त्र के संचालन व संग्रह में भी निपुण थे। इनमें से कोई भी अनावश्यक शक्ति का प्रयोग करने का इच्छुक नहीं रहा। सभी प्रकृति का संरक्षण करते रहे।

बाल, वृद्ध, रोगी, और अबला पर अत्याचार किसी भी परिस्थिति में किसी ने भी नहीं किया। सभी मिलकर व अलग अलग रहते हुये भी इन सबका संरक्षण किये और इस नियम का कड़ाई से पालन स्वयं किये और दूसरों से भी कराये। सभी प्रकृति की चाल का अनुकरण किये। वे जानते रहे कि उनके विकास का रहस्य उसी संतोष में है जो प्रकृति अपने पनपने, पल्लवित और पुष्पित होने में करती है। वे जानते थे कि जो वे करते हैं वह तभी सफलता का मानक बन सकता था, जब उस कार्य को करते हुये उनमें उसके प्रति उससे लगाव झलकता रहेगा। वे जानते थे कि इस बात की संभावना हो सकती है कि कार्य से सदैव प्रसन्नता न मिले परंतु सत्य तो यही है कि बिना कार्य किये प्रसन्नता संभव नहीं है।

संजय, पर हमारे काल में भाग्य को कर्म से नीचे रखा गया। भाग्य सदैव कर्म से प्रभावित होता रहा। इस काल की मान्यता रही कि व्यक्ति कार्य करते करते स्वयं अपने भाग्य का निर्माता बन जाता है। यह अलग बात है कि उसका भाग्य औरों से अच्छा है, बुरा है अथवा केवल भिन्न है। यह वह काल रहा जब व्यक्ति अपने कार्य करने की सीमा निर्धारित कर देता, तब वह इस बात का भी निर्धारण कर बैठता कि उसकी क्षमता की आखिर सीमा क्या है?

अवश्य राजन्, यह वह काल था जब केवल उत्तमता ही अक्षुण्य थी। इस काल में उत्तमता एक विचार बनी रही, यह जानकर भी कि उत्तमता सापेक्षिक होती है। इस काल की मान्यता रही कि लोग सर्वोत्तम कर्म व विचार अपने समय में ही देख पाते हैं, और इन सर्वोत्तम विचारों को ही आने वाली पीढ़ी अपने लिये धरोहर मानती है।

Sample Copy. Not For Distribution.

यह वह काल था जब सामान्य जन दूसरों के विचारों के प्रति संकीर्ण नहीं थे। यही नहीं, वे अपने पास की हर वस्तु को दूसरों को देने का प्रयत्न करते थे। उनका मानना था कि हमारी वस्तु दूसरों के लिये हमारी सोच से अधिक उपयोगी हो सकती है। वे इस बात को भली भांति जानते थे कि उनका भविष्य प्रति दिन उनकी आंखें खुलते ही प्रारंभ हो जाता है, उन्हें हर सुबह उनके व उनके चारों ओर के जीवों के जीवन के लिये बहुत सी संभावनायें खुली मिलती हैं, कोई व्यक्ति बुद्धिमान पैदा नहीं होता है, समय ही उसे सिखाता है और समय चलते रहने से बदलता है। जिस प्रकार पुरानी चीजें बदलना जरूरी होती हैं, ठीक उसी प्रकार स्वयं को समय के साथ बदलने का प्रयास करते रहना सफलता के मार्ग पर चलना होता है।

संजय, यह निर्णय का काल था। यहां निर्णय में विलंब का स्थान नहीं था। सबको ज्ञात था कि निर्णय अच्छा है अथवा खराब, इसका ज्ञान तो निर्णय के उपरांत ही हो पाता है। अतएव निर्णय लेना, निर्णय न लेने से सदैव अच्छा माना गया। कठिन कार्य से ही व्यक्ति के चरित्र का पता चलता है क्योंकि कठिन परिस्थिति में कुछ बांहें मोड़ लेते हैं, कुछ अपनी नाक मोड़ लेते हैं और कुछ तो कार्य की ओर मुड़ते ही नहीं हैं। फिर राज्य का आखिर क्षरण क्यों हुआ?

राजन!, समय बीतता गया और निर्धारित मूल्यों के पालन में लापरवाही शुरू हो गयी। राजसिंहासन पर उत्तराधिकार व प्रतिबद्ध नियमों की अनदेखी कर सत्ता संजोने की प्रवृत्ति जागने लगी। परिणाम हुआ कि कलह का वातावरण पैदा हुआ। एक समय ऐसा आया कि इस सत्ता को विघटित होने से रोकने के लिये भयंकर संघर्ष की स्थिति पैदा हो गयी। आप, हम साक्षी रहे, जब विध्वंश की शुरूआत हुयी और सबकुछ समाप्त हो जाने के बाद, नवनिर्माण पुनः प्रारंभ हुआ।

Sample Copy. Not For Distribution.

2

जब अनुपयोगी को उपयोगी की तरह प्रयोग किया जाता है तब उसका अंतिम परिणाम अलाभकारी होता है।

कठिन परिस्थितियों में जो अपना क्षरण नहीं होने देते, जो कठिन परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना लेते हैं और उसमें पलते, बढ़ते और कुछ न कुछ करते चले जाते हैं, वे चिरकाल तक बने रहते हैं। परिस्थितियां हमारे लिये एक माध्यम बनकर उभरती हैं जिनका केवल एक उद्देश्य होता है कि हम कुछ सीखें, हम कुछ नया करें और अपने जीवन को आगे बढ़ायें।

जब हम परिस्थितियों से अपनी आवश्यकतानुसार सीख ले लेते हैं तो वे स्वतः लुप्त हो जाती हैं। हमें परिस्थितियों के आने और उनके जाने के बारे में सोचना अवश्य चाहिये कि वे क्यों उपस्थित हुयीं और कैसे गयीं पर अपनी सोच को उन परिस्थितियों से प्रभावित नहीं करना चाहिये। कठिन परिस्थितियों में भी अपने गौरव व दूसरों के मर्यादा की रक्षा करनी चाहिये।

गलती करना हमारा स्वभाव है, पर गलती होने पर जब हम उसे सुधारने का प्रयास नहीं करते हैं और अपने से हुयी गलती को सत्य प्रमाणित करने का प्रयास करने लगते हैं, तब हमारा यही प्रयास एक नयी गलती के लिये मार्ग बना रहा होता है। हमें नहीं भूलना चाहिये कि गलती के लिये क्षमा मांगना उत्तम कार्य है क्योंकि अनुचित कार्य तो सदैव अनुचित ही रहता है और उसका हर क्षण विरोध होता रहता है। एक साहसी व्यक्ति अवश्य अनुचित का विरोध करता है क्योंकि

Sample Copy. Not For Distribution.

ऐसा करना उसका सामान्य आचरण होता है। हमें प्रयास कर सदैव अनुचित कार्य से बचने का चिंतन करना चाहिये।

राजन्, हमें स्मरण है कि एक सुबह आपके महल में पहुंचने पर हमने देखा कि राजमहल में कौतुहलजन्य सन्नाटा छाया हुआ था। राजदरबार सूना पड़ा था। राजसिंहासन के पास आप अशांत चित्त होकर टहल रहे थे। गांधारी पास में खड़ी थीं। शांति ऐसी थी कि बहुत दूर स्थित पक्षियों की आवाजें वातायन से रूक रूक कर आती सुनायी दे रही थीं। चारों ओर का वातावरण गंभीर था। बालसूर्य की रोशनी धीरे धीरे आरही थी परंतु आप व्यथित थे।

आप पूछे जा रहे थे, 'संजय तुम कहां थे? हम तुम्हारी बहुत समय से प्रतीक्षा कर रहे थे। तुम चुप क्यों हो? बताओ, कुरूक्षेत्र[4] में मेरे पुत्र क्या कर रहे हैं?'

राजन्, मैं वहीं से आ रहा हूं। सबकुछ सामान्य है। सेनायें सज्जित हो रही हैं।

संजय, हमें याद है, तुम क्षणभर के लिये आंखें बंद कर ध्यान मग्न हो गये थे। तुम कुछ क्षण बाद बोले थेः दुर्योधन, द्रोणाचार्य के पास गया है, आखिर क्यों?

हमने सोचा, शायद युद्ध रूक सकता था। आप अंतिम समय पर इसे रोकने का आदेश देंगे। पर जब आपने पुनः पूछा कि दुर्योधन युद्ध नहीं कर रहा है, क्या संजय? तब मैं अवाक् रह गया था। हम तब जान पाये कि आप भी युद्ध के लिये उत्सुक थे। आपकी उत्सुकता ने युद्ध का ताजा हाल जानने के लिये आपको अधीर कर दिया था। हमें आपको बताना पड़ा कि महाराज! दुर्योधन, आचार्य को बता रहा था कि उनके शिष्य धृष्टद्युम्न ने कैसे पाण्डव–सेना की व्यूह रचना की थी।

दुर्योधन आचार्य से कह रहा था कि उसकी कौरव–सेना में बहुत से शूरवीर थे जिन्होंने उसके लिये अपना जीवन समर्पित कर दिया था। उसने कहा कि भीष्मपितामह के संरक्षण में कौरव सेना पांडवों की सेना से ज्यादा शक्तिशाली

Sample Copy. Not For Distribution.

थी और कौरवों की विजय निश्चित थी। वह कह रहा था कि पांडवों की सेना को वह आसानी से जीत लेगा।

राजन्, उसने कहा कि पितामह अथवा उसे स्वयं लड़ने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। उसके मित्रों की सेनायें ही यह युद्ध जीत लेंगी। उसका पक्ष अत्यंत विशाल, बलशाली और अजेय है।

आपकी उत्सुकता और बढ़ी, आपने कहा, आगे बताओ संजय्!

पितामह भीष्म ने दुर्योधन का उत्साह बढ़ाने के लिये सिंह की तरह दहाड़ते हुये अपना शंख बजाया। इसके बाद चारों ओर से शंख, नगाड़ों, मृदंगों, नरसिंघों आदि बाजों की आवाजें सुनायी देनी शुरू हो गयीं।

आपकी अधीरता बढ़ती गयी, आप पल पल कहने लगे, संजय, लगता है, अब युद्ध शुरू हो रहा है! हमें आभास हो गया कि आपके जीवन का उद्देश्य राज्य की प्रजा का कल्याण नहीं रह गया था। आपका एकमात्र उद्देश्य युद्ध में शीघ्र विजय रह गयी थी। यह युद्ध दुर्योधन नहीं लड़ रहा था। वह तो आपकी परछाईं भर था। युद्ध तो आपकी राजा बने रहने की इच्छा लड़ रही थी।

मैंने देखा कि सफेद घोड़ों से जुता हुआ एक रथ दोनों सेनाओं के बीच में आ रहा था। इसे कृष्ण चला रहे थे। इस पर अर्जुन धनुष लिये बैठा था। इस पर लाल रंग की एक ध्वजा फहर रही थी जिस पर एक बानर का चित्र बना हुआ था।

कृष्ण रथ को, युद्ध के लिये तैयार आपके पुत्र दुर्योधन और पांडु के पुत्रों की सेनाओं के बीचो बीच लाये। सभी लोग आश्चर्यचकित होकर उन्हें देखने लगे।

आखिर क्यों संजय?

राजन्! अर्जुन कह रहा था कि हे कृष्ण, हमें उन सभी लोगों को देखना है जो उसके भ्राता दुर्योधन की मदद के लिये युद्धभूमि में आये हैं। वह कह रहा था कि हमें जानना है कि किन किन योद्धाओं को इस युद्ध में हमें मारना है। वह

Sample Copy. Not For Distribution.

कह रहा था कि हे कृष्ण, जब तक मैं सबको देख ना लूं, तब तक रथ को रोक कर रखिये और कृष्ण सभी योद्धाओं को दिखा रहे थे।

लेकिन, संजय! तुम चुप क्यों हो गये थे?

राजन्! अर्जुन ने अचानक गांडीव रख दिया था। वह रथ के पिछले भाग में जाकर बैठ गया था। वह कृष्ण के सामने हाथ जोड़कर बैठा रहा। वह कांपने लगा था। वह कह रहा था कि उसे राज्य नहीं चाहिये। वह युद्ध में अपने गुरूजनों, संबंधियों और परिजनों को राज्य के लिये नहीं मारेगा। वह कह रहा था कि हे कृष्ण! मैं युद्ध नहीं करूंगा।

आपने कहा था, लगता है, अर्जुन युद्ध से डर गया है। दुर्योधन की विशाल सेना देखकर वह भयभीत हो गया है। दुर्योधन के मित्रों की शूरवीरता देखकर वह डर गया है। अब तो मेरे पुत्र दुर्योधन की विजय निश्चित है।

कृष्ण ने अर्जुन को समझाया था कि यदि वह युद्ध से भागेगा तो उसे अपकीर्ति मिलेगी। उसके दुश्मन उसके सामर्थ्य की निंदा करेंगे और उसके मित्र उसको कायर कहेंगे। कृष्ण ने कहा था कि हे अर्जुन! अगर तुम यहां मारे गये, तो तुम्हें स्वर्ग मिलेगा और यदि विजयी हुये तो तुम राज्य का भोग करोगे।

संजय! जब अर्जुन अपने भाइयों के विरूद्ध युद्ध नहीं करना चाहता था तो फिर कृष्ण ने अर्जुन को युद्ध के लिये उकसाया, आखिर क्यों?

राजन्! कृष्ण अर्जुन के सारथि थे। वह उसका रथ चला रहे थे। वह अर्जुन को अपना सखा मानते थे। वह उससे अतिशय प्रीति करते थे। अर्जुन भी कृष्ण की हर बात मानता था। एक सखा का कर्तव्य होता है कि वह अपने सखा को वह राय दे जिससे उसकी कीर्ति बढ़े और उसका मान बढ़े।

आपको तो पता ही है कि सारथि अपने राजा को युद्धक्षेत्र हो अथवा शांतिक्षेत्र, समस्त बाधाओं से बचाता हुआ सकुशल और सुरक्षित रखता है। सारथि युद्धनीति, राजनीति और व्यवहारनीति का जानकार होता है। वह राजा का मित्र भी

Sample Copy. Not For Distribution.

होता है और उसका सलाहकार भी। वह राजा का परम विश्वासपात्र होता है।

संजय, तुम्हें महर्षि व्यास ने जब दिव्यदृष्टि दिया, तब तुम्हें कैसा महसूस हुआ था?

राजन्, ऐसी दृष्टि से क्या लाभ जो अपनों को अपनों से लड़ता देखे। मैं कहीं रहते हुये कुरूक्षेत्र में हो रही सभी घटनाओं को देख लेता था और वहां उपस्थित सबकी बातों को सुन भी लेता था। व्यास ने दिव्यदृष्टि देते समय हमें बताया था कि कुरूक्षेत्र की कोई भी घटना हमसे छिपी नहीं रहेगी। सामने हो अथवा परोक्ष में, दिन में हो या रात में, यहां तक कि किसी के मन में सोची हुयी बात भी हम जान जायेंगे।

कोई भी शस्त्र हमें काट नहीं पायेगा और श्रम थका नहीं पायेगा। हम हमेशा वहां से, आपको समस्त घटना की जानकारी देने के लिये, जीवित निकल आयेंगे। कोई भी हमारा नुकशान नहीं कर पायेगा। लेकिन यह दिव्यदृष्टि हमारे मन और आंखों से सदैव संयुक्त रहेगी। जबतक हम अपने मन की सुनकर आपको सुनाते रहेंगे तभी तक यह दिव्यदृष्टि हमारे पास रहेगी, अन्यथा यह अदृश्य हो जायेगी।

क्यों संजय?

राजन्, दिव्यदृष्टि देते समय, महर्षि ने बताया था कि इस संघर्ष काल में ऐसे अनेक क्षण आयेंगे जब आप अकेले रहना चाहेंगे और हम चाह कर भी आपको अकेले नहीं छोड़ पायेंगे। उस समय हमें अपनी दृष्टि के अतिरिक्त मन से सोचना होगा और आपके साथ खड़ा रहना होगा। संभव है, आपको हमारा साथ उस समय उचित न लगे परंतु महर्षि के वचन के अनुसार हमें आपके साथ ही रहना होगा।

हम सुन पा रहे थे कि प्रजा का हर वर्ग आप पर लांछन लगा रहा था कि आप चाहते तो यह युद्ध कभी नहीं होता। प्रजा हर पल यही पूछ रही थी कि अगर धृतराष्ट इतना धर्मज्ञ और नीतिज्ञ था तो उसने इस विध्वंशकारी युद्ध की आज्ञा दी, आखिर क्यों?

Sample Copy. Not For Distribution.

Get Complete Book
At Educreation Store
www.educreation.in

Sample Copy. Not For Distribution.

आखिर क्यों?

पिता अपने यश से पुत्र को हमेशा यशस्वी बनाता है। यदि पुत्र केवल पिता की सामान्य बातों को ही सदैव मानता रहे तो फिर उससे कभी अधर्म अथवा अपकीर्तिमय कार्य होने की संभावना नहीं रहती है क्योंकि पिता अपकीर्ति के कार्य कभी भी अपने पुत्र से नहीं कराता है। वह केवल उसके भविष्य को संरक्षित करने और उसे संवारने में ही तल्लीन रहता है। इस पृथ्वी पर पिता, और गुरू ही ऐसी दो विभूतियां हैं जो कमशः अपने पुत्र और अपने शिष्य के अपने से आगे निकल जाने पर गर्व का अनुभव करती हैं, अन्य तो ईर्ष्या करते हैं।

लेखक से संपर्क हेतु :
✉ sbdhar@educreation.in

EDUCREATION
PUBLISHING (Delhi)
www.educreation.in

Also available as an eBook

FICTION

ISBN 978-1-61813-644-2

9 781618 136442 >